*पैसा और शिक्षा**

रघुराम जी. राजन

आज यहां वक्तव्य देने हेतु आमंत्रित करने के लिए धन्यवाद। सबसे पहले आप सभी को आज डिग्री प्राप्त करने के लिए बधाई। आपके शिक्षकों को, परिवारों को और मित्रों को भी बधाई जिन्होंने आपका ख़याल रखा है और आपको सहारा दिया है।

दीक्षांत समारोह के भाषण, दुनिया से सीधे दो-चार होने से पहले, आपके विचार करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे उपलब्ध कराने का एक मौका देते हैं। मैं, यहां दो मुद्दों पर चर्चा करूंगा - पहली बात आर्थिक दृष्टि से होगी जो अर्थशास्त्री के रूप में मेरे अनुभव पर आधारित होगी और दूसरी बात निजी विश्वविद्यालयों के बारे में होगी, जो ऐसे ही एक विश्वविद्यालय में 20 वर्षों से अधिक कार्य करने के मेरे अनुभव पर आधारित होगी। इस दीक्षांत भाषण की पोडियम बार अधिक ऊंची नहीं होने से मैं सहज एहसास के साथ अपनी चर्चा प्रारंभ कर रहा हूं। यदि आज से कुछ वर्षों के बाद आप यहां कहे जाने वाले मेरा एक भी शब्द याद कर पाएंगे तो मैं समझूंगा कि मैं दीक्षांत भाषण देने वाले औसत वक्ता से बेहतर हो चला हूं। अधिकांश लोगों को यह याद नहीं रहता है कि उनका दीक्षांत भाषण किसने दिया था। क्या कहा था की तो बात ही छोड़ दें।

प्रथम, आर्थिक दृष्टि से : हाल ही में प्रकाशित एक बहुत रोचक पुस्तक में हावर्ड विश्वविद्यालय के दार्शनिक माइकल सैंडेल ने उन बहुत सी चीजों का उल्लेख किया है जो आधुनिक समाज में पैसों से खरीदी जा सकती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वह हमें बाजार[1] के बढ़ते प्रभाव के प्रति आवेश में लाना चाहते हैं। प्रोफेसर सैंडेल की चिंता सिर्फ कुछ मुद्रा के आदान-प्रदान की भ्रष्ट प्रकृति के बारे में नहीं है, बल्कि वह उनकी प्रभावशीलता के बारे में भी चिंतित हैं। उदाहरण के लिए, क्या बच्चों को पुस्तकें पढ़ने के लिए पैसों का प्रलोभन देने से उनमें पुस्तकों के प्रति आकर्षण उत्पन्न होता है ? उन्हें पैसों की असमान उपलब्धता की भी फिक्र है, जिसके कारण पैसों के प्रयोग से हाने वाला कारोबार स्वतः गैर-बराबरी वाला हो जाता है। अधिक व्यापक रूप से, सैंडेल को यह डर है कि बेनामी मौद्रिक लेनदेनों के कारण सामाजिक एकजुटता भंग होती है और वह समाज में पैसों की भूमिका को कम करने की पैरवी करते हैं।

सैंडेल की चिंताओं में पूर्णतः नवीनता तो नहीं है लेकिन उन्होंने जो उदाहरण दिए हैं वे विचारणीय हैं। उदाहरण के लिए, संयुक्त राज्य अमेरिका में कांग्रेस की सुनवाई हेतु आम जनता को दिए जाने वाले मुफ्त टिकटों को कतार में खड़े होकर प्राप्त करने के लिए कुछ कंपनियां बेरोजगार लोगों को पैसा देती हैं। उसके बाद, वे कंपनियां इन टिकटों को खेमेबाजी में लगे लोगों को और कॉर्पोरेट वकीलों को बेचती हैं जिनके लिए कारोबारी दृष्टि इन सुनवाइयों का महत्व होता है, किंतु उनके पास कतार में खड़े होकर टिकट लेने का समय नहीं होता है। स्पष्टतः, प्रतिभागी जनतंत्र में सार्वजनिक सुनवाइयां महत्वपूर्ण घटनाएं होती हैं। ये बराबरी से सभी नागरिकों को सुलभ होना चाहिए। इसलिए इस सुलभता को बेचना जनतांत्रिक सिद्धांतों के तहत दोषपूर्ण मालूम पड़ता है।

यहां बुनियादी समस्या टिकटों की कमी की है। किसी विशिष्ट महत्वपूर्ण सुनवाई में रुचि रखने वाले सभी लोगों को उपलब्ध सीमित स्थान में जगह नहीं दी जा सकती है। इसलिए हमें 'प्रवेश टिकट ' बेचना पड़ता है। या तो हम उन लोगों को सुनवाई में जाने की अनुमति दे सकते हैं, जो टिकट के बदले में अपना समय खर्च करते हैं - जो व्यक्ति सबसे अधिक समय तक कतार में खड़ा रहे उसे टिकट दिया जाए- या फिर पैसों के बदले में टिकट की बोली लगाई जाए। इनमें से पहले वाला उपाय न्यायसंगत प्रतीत होता है, क्योंकि सभी नागरिकों के पास समय की एक समान उपलब्धता होती है। हम सभी के पास एक दिन में 24 घंटे का समय होता है। क्या एक अकेली मां जिसके तीन बच्चे हों, जिस पर काम का बोझ होता है, उसके पास उतना अतिरिक्त समय उपलब्ध होता है जितना कि गर्मी की छुट्टियों में विद्यार्थियों के पास होता है ? और क्या एक बड़े निगम की विधि सलाहकार यदि किसी मामले की सुनवाई के लिए काफी समय तक कतार में खड़ी रहे तो उससे समाज का अधिक भला होगा ?

इस प्रकार से, यह तय करना कि प्रवेश टिकट समय के बदले दिया जाना बेहतर है या पैसों के बदले दिया जाना, इस बात पर निर्भर करता है कि हम क्या हासिल करना चाहते हैं। यदि हम समाज की उत्पादन संबंधी दक्षता में वृद्धि करना चाहते हैं तो लोगों की पैसे देकर टिकट खरीदने की इच्छा इस बात का तार्किक संकेत है कि कांग्रेस की सुनवाई सुलभ होने से उनको क्या लाभ होने वाला है। पैसों के बदले सीट के लिए बोली लगाना भी उचित है - वकील अपने मामलों के संक्षेप तैयार करने के माध्यम से समाज के प्रति अधिक योगदान करेगा, न कि कतार में खड़े होकर। दूसरी ओर, यदि इस बात को महत्व दिया जाता है कि नौजवान नागरिक, जो बहुत संवेदनशील होते हैं, यह देखें कि उनका लोकतंत्र कैसे कार्य करता है; यदि बेरोजगार किशोरों के साथ में कॉर्पोरेट कार्यपालकों को कतार में खड़े करने के माध्यम से सामाजिक एकता को महत्व दिया जाता है तो शायद हमें लोगों को कतार में खड़े होकर अपना समय खर्च करने को बाध्य

---

* 7 मई 2016 को शिव नाडार विश्वविद्यालय, दिल्ली में डॉ. रघुराम जी. राजन, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक का दीक्षांत भाषण।

[1] माइकल सैंडेल, 2012, ऐलन गली, लंदन द्वारा लिखित पुस्तक 'व्हाट मनी कांट बाई : द मोरल लिमिट्स ऑफ द मार्केट/पैसे से क्या नहीं खरीदा जा सकता : बाजार की नैतिक सीमाएं'।

करना चाहिए और प्रवेश टिकिटों को अहस्तांतरणीय बनाना चाहिए। और यदि हम यह सोचते हैं दोनों लक्ष्यों को अपनी भूमिका निभाना चाहिए तो शायद हमें व्यस्त वकीलों के स्थान पर समय की अतिरिक्त उपलब्धता वाले लोगों की सेवाएं लेने वाले लोगों के प्रति उंगली नहीं उठाना चाहिए, यदि वे सभी टिकट नहीं ले लेते हों।

सैंडेल को मानव अंगों की बिक्री के एक अन्य मामले की भी चिंता है। यदि पैसों के लिए फेफड़ा या गुर्दा बेचा जाए तो जरूर कोई गड़बड़ मालूम होती है। हालांकि, यदि कोई अज्ञात व्यक्ति किसी छोटे बच्चे को गुर्दा दान करता है तो हमें खुशी होती है। इसलिए यह स्पष्ट है कि अंग के प्रत्यारोपड़ से हमें नाराजगी नहीं होती है - हम इस बारे में नहीं सोचते हैं कि अंग दानकर्ता को उनके गुर्दे के महत्व के बारे में गलत जानकारी दी गई है या उसे गुर्दे बेचने के लिए मूर्ख बनाया गया है। मुझे लगता है कि हमें अंग बेचने वाले के पछतावे के बारे में भी कोई चिंता नहीं होती - आखिर वे पैसों के बदले अपने बहुत महत्वपूर्ण अंग से अलग हो रहे होते हैं जो लौटने वाला नहीं है। हम में से शायद कोई इस काम के लिए राजी नहीं होगा।

मैं समझता हूं कि इस संबंध में हमारे असहज होने का कुछ संबंध उन परिस्थितियों से है जिनमें इस तरह की बिक्री की जाती है। यदि लोगों को जीवित रहने के लिए अपने अंग बेचने पड़ें तो फिर हम किस तरह के समाज में जीवन यापन करते हैं ? अंगों की बिक्री पर प्रतिबंध लगाए जाने से हम बेहतर महसूस करते हैं, परन्तु क्या इससे समाज में सचमुच बेहतरी आती है ? संभवतः, इससे समाज को यह सुनिश्चित करने का संदेश जाता है कि लोगों को कभी ऐसी परिस्थितियों का सामना नहीं करना पड़े कि उन्हें अपने अंग बेचने के बारे में सोचना पड़े। यदि समाज विद्यमान समस्याओं से विमुख हो जाए और या तो चोरी-छिपे ऐसी बिक्री जारी रहे या फिर लोगों को ऐसी गंभीर परिस्थतियों में डाला जाए कि वे इससे भी बुरे उपाय सोचने को विवश हो जाएं तो शायद ऐसा संदेश न जाए।

मैं यह भी मानता हूं कि हमारी असहजता का थोड़ संबंध इस बात से भी है कि हम इसे गैर-बराबरी की अदला-बदली मानते हैं। बेचने वाला अपने शरीर का एक हिस्सा दे रहा है जो उसे वापस नहीं मिल सकता किंतु खरीदने वाला सिर्फ पैसा देता है, जो शायद उसने भाग्यशाली शेयर के कारोबार से कमाया हो या ऐसे काम से कमाया हो जिसमें बहुत अधिक पैसा मिलता हो। यदि यह पैसा अपने फेफड़े के एक हिस्से को बेचकर या वर्षों के कठोर परिश्रम से जमा बचत से आता तो शायद हम इसे नैतिक रूप से अधिक बराबरी का सौदा मान सकते हैं। पैसे का बेनामी होना ही तो इसकी मुख्य विशेषता है। प्राप्त होने वाले पैसे का प्रयोग करने के लिए हमें उसके बारे में कुछ भी जानने की जरूरत नहीं होती। चूंकि पैसे के बेनामी होने से इसका स्रोत छुप जाता है, इसलिए कुछ वस्तुओं के भुगतान के माध्यम के रूप में इसकी सामाजिक स्वीकार्यता कम हो सकती है।

प्रोफेसर सैंडेल ने हमें सोचने पर विवश कर दिया है। लेकिन ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने मौद्रिक लेनदेन पर रोक लगाने की बात बहुत हड़बड़ी में कही है, क्योंकि उनकी वास्तविक चिंता शायद पैसों के अनुचित वितरण से संबंधित है। ऐसा भी लगता है कि उन्होंने पैसे के बेनामी होने के महत्व को नजरअंदाज किया है। स्वतंत्र बाजार में खरीदी के लिए सिर्फ पैसे की जरूरत होती है। ऐसी खरीद के लिए आपको अच्छे खानदान से ताल्लुक रखने, अच्छा पारिवारिक इतिहास होने, खान-पान का उचित ढंग आने या ठीक ढंग के फैशन के कपड़े पहने या फैशन के अनुरूप दिखने की जरूरत नहीं होती। ऐसा इसलिए है क्योंकि पैसे की कोई गंध नहीं होती, यह बराबरी लाने वाला महान कारक है। संपूर्ण इतिहास में अनेक लोग संसाधन जुटाने और उनका निवेश करने में सफल रहे हैं, जिससे वह संसार निर्मित हुआ है जिसमें हम जी रहे हैं। दलितों के लिए कारोबार शुरू करना आसान बनाना उनके सामाजिक रुतबा बढ़ने में सचमुच अधिक मदद मिलेगी, क्योंकि सशक्त बनने में पैसा किसी भी अन्य सकारात्मक कदम की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली होता है। पैसा और संपत्ति के प्रयोग पर रोक लगाने की बजाय हमें इसके प्रयोग के बारे में समाज की सहनशीलता को बढ़ाने के बारे में सोचना चाहिए।

इन सारी बातों में आप लोगों के लिए क्या सबक हो सकते हैं ? पहला, सैंडेल की बातों का मेरे द्वारा लगाए गए अर्थ सहित सभी बातों के बारे में प्रश्न करने से मदद मिलती है, क्योंकि प्रश्न करने से ही स्पष्टता उत्पन्न होती है। दूसरा, स्वतंत्र बाजारों के पक्ष में समाज के सहयोग और जनता के बीच संपत्ति और अवसरों के निष्पक्ष वितरण में बहुत मजबूत संबंध है, यदि आप मेरे लगाए गए अर्थ में यकीन करते हों। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जब आज देशों के बीच असमानता में कमी आ रही है तब भी देशों के भीतर असमानता बढ़ रही है। आज, ऐसा मालूम पड़ता है कि सुचारु बाजार वाली अर्थव्यवस्थाएं भी उन्हीं लोगों के पक्ष में हैं जिनके पास पहले ही काफी पैसा है। कुछ हद तक इसका कारण यह है कि अच्छे वेतन वाले काम के लिए हुनर और क्षमताओं का होना बहुत महत्वपूर्ण हो गया है, और जिनका जन्म अच्छे माहौल में हुआ हो उनको ऐसे काम मिलने की संभावनाएं काफी बेहतर होती हैं। जिनको ऐसा काम मिल जाता है वे अलग-अलग प्रकृति के बहुत से व्यवसाय करने लगते हैं, जबकि अधिकांश आय (उदाहरण के लिए एप्प तैयार करने, वास्तुकला या अभिनय के बारे में विचार करें) सबसे अधिक सामर्थ्यवान कुछ उद्यमियों और सबसे बढिया कार्मिकों को प्राप्त होती है। इससे बचपन की शुरूआत में की गई तैयारियों का और सही बिरादरी में तथा सही माता-पिता के घर जन्म लेने का महत्व उभर कर सामने आता है। आय की असमानता बढ़ती जा रही है। कुछ लोगों के पास बहुत भारी आय के स्रोत हैं वहीं कुछ लोग को दूसरे वक्त के भोजन के लाले पड़े हुए हैं।

हम सब मिलकर बाजार में भरोसा कायम करने के लिए क्या कर सकते हैं ? सभी को स्कूली शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं, बिना भेदभाव के काम के बाजार, जिसमें बहुत से रोजगार के अवसर हों, और उन्नति करने के लिए समान अवसरों, जिसमें लिंग, जाति या परिवेश का कोई भेदभाव नहीं हो; की प्रभावी उपलब्धता के लिए हमें मेहनत करना पड़ेगा। ये सब किए जाने से संपत्ति की कथित वैधता तथा इसे खर्च किए जाने वाले क्षेत्र के विस्तार के संबंध में समाज की उत्सुकता में वृद्धि होगी। सुविचारित परोपकार के माध्यम से, जैसा कि इस विश्वविद्यालय की स्थापना किए जाने से पता चलता है, महान संपत्ति के प्रति समाज की स्वीकार्यता को और बढ़ाने में मदद मिलेगी। अंततः, सफलता की बहुत संभावना के साथ प्रारंभ होने वाले आपके कैरियर में आप लोग सुस्पष्ट मूल्यों के साथ धनार्जन करिए और वैसे ही मूल्यों की स्थापना के लिए व्यय भी करें। ऐसा करने से न सिर्फ आपका कामकाज अधिक आनंददायक होगा बल्कि आप लोग आर्थिक स्वतंत्रता को भी मजबूती प्रदान करेंगे, जिसका हम कभी-कभी सही मूल्य नहीं समझ पाते हैं।

मैं निजी शिक्षा के अपने मुद्दे की ओर पुनः रुख करता हूं। पूरी दुनिया में निजी शिक्षा खर्चीली है, विशेषरूप से उच्च गुणवत्ता के अनुसंधान कार्य वाले विश्वविद्यालयों में, जो निरंतर और महंगी होती जा रही है। ऐसा इसलिए है क्योंकि बेहद महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में अच्छे प्राध्यापकों की कमी है। इसके समाधान के लिए दो विकल्पों का प्रस्ताव किया जाता है। इनमें एक है प्रौद्योगिकी। सबसे बढ़िया प्राध्यापकों के व्याख्यानों को क्यों न नेट के माध्यम से हजारों विद्यार्थियों के लिए प्रसारित किया जाए ? इसमें समस्या यह है कि ऐसी कक्षाएं सैद्धांतिक रूप से तो आकर्षक प्रतीत होती हैं किंतु इनके पूर्ण होने की दर बहुत कम है। हम ऐसे पाठ्यक्रमों को शायद इसीलिए पूर्ण नहीं कर पाते क्योंकि हम सामान्य पाठ्यक्रम को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय में जाकर अनुशंसित पुस्तकें नहीं पढ़ते हैं। हमारे जीवन में अनेक काम ऐसे होते हैं जिनको अन्य बाध्यताओं के बिना पूर्ण किया जाना होता है। ऑनलाइन पाठ्यक्रमों को अभी भी यह निर्धारित करने की जरूरत है कि न सिर्फ विद्यार्थियों को प्रतिबद्ध बनाएं बल्कि विश्वविद्यालय समुदायों तथा परिवेश की तरह सीखने में मदद उपलब्ध कराने की भी जरूरत है।

दूसरा समाधान है कि अनुसंधान को समाप्त कर दिया जाए और ऐसे शिक्षक रखे जाएं जो अनुसंधान कार्य न करें। आखिरकार, ऐसे शिक्षकों को पीएच डी की उपाधियों की जरूरत नहीं होती और ऐसे बहुत से लोग उपलब्ध भी होंगे। तथापि, यह मालूम पड़ता है कि संयुक्त राज्य अमेरिका में विद्यार्थी अपनी स्नातक उपाधियां भी, जिनमें विद्यार्थी थोड़ा अनुसंधान कार्य करते हैं, सिर्फ शिक्षण कार्य करने वाले महाविद्यालयों की अपेक्षा अनुसंधान कार्य करने वाले विश्वविद्यालयों से प्राप्त करने को प्राथमिकता देते हैं। ऐसा नहीं है कि पढ़ाई जाने वाली मूलभूत सामग्री के बारे में अनुसंधान कार्य करने वाले प्राध्यापकों को अधिक अधिक जानकारी होती है, अक्सर उनका अनुसंधान सीमित दायरे में होता है। न ही यह आवश्यक है कि अनुसंधान करने से कोई अच्छा शिक्षक बन जाता है। किसी विषय की बहुत गहन स्तर पर जानकारी होने से कभी-कभी उसकी व्याख्या करना अधिक दुष्कर कार्य बन जाता है। हालांकि, मेरा मानना है कि अच्छे अनुसंधान के लिए जिज्ञासा होनी चाहिए। अमूमन सभी अनुसंधानकर्ता जीवन-पर्यंत जिज्ञासु बने रहते हैं और संबंधित क्षेत्र की गतिविधियों को दर्शाने के लिए निरंतर अपनी शिक्षण सामग्री को अद्यतन करते रहते हैं। मेरा यह अनुमान है, हालांकि इस बात का मेरे पास कोई प्रमाण नहीं है, कि इसी कारण से अनुसंधान कार्य करने वाले विश्वविद्यालयों में शिक्षण को आमतौर पर सिर्फ शिक्षण कार्य करने वाले महाविद्यालयों की तुलना में अधिक प्राथमिकता दी जाती है। अनुसंधान कार्य करने वाले विश्वविद्यालयों में आपको अधिक चुनौतीपूर्ण अद्यतन सामग्री पढ़ाई जाती है।

मूलभूत और महत्वपूर्ण बात यह है कि अच्छी गुणवत्ता-युक्त अनुसंधान कार्य करने वाले विश्वविद्यालयों में शिक्षा कुछ समय तक खर्चीली बनी रहने वाली है। ऐसा निश्चित रूप से तब तक जारी रहेगा जब तक हम प्रौद्योगिकी और जनता को एकीकृत करना न सीख लें। सभी पात्र लोगों तक शिक्षा की उपलब्धता के विस्तार की जरूरत को देखते हुए हमें उपाधियां प्राप्त करना वहनीय बनाना होगा। विद्यार्थियों को ऋण प्रदान करना समाधान का एक अंग हो सकता है। किंतु इस बारे में सतर्कता बरतनी होगी कि जिन विद्यार्थियों के पास संसाधन उपलब्ध हों वे पूरा ऋण चुकाएं, वहीं पर जो विद्यार्थी विपरीत समय का सामना कर रहे हों या जो कम वेतन वाली सरकारी सेवा स्वीकार कर लेते हैं, उनके लिए ऋण का कुछ हिस्सा माफ कर दिया जाए। हमें यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि अनैतिक संस्थाएं, जो विद्यार्थियों को बेकार की उपाधियां प्रदान करते हों और उन पर भारी कर्ज का बोझ डालते हों, सूचना से वंचित विद्यार्थियों को शोषण का शिकार न बनाएं। समाधान का दूसरा हिस्सा परोपकार है, जो सिर्फ ऐसी संस्थाओं की स्थापना करने वालों की ओर से न हो बल्कि विश्वविद्यालय के सफल विद्यार्थियों को भी इसमें योगदान करना होगा। विश्वविद्यालय को संसाधन लौटाना आने वाली पीढ़ियों के लिए लागत में कमी लाने का एक जरिया हो सकता है। इसके माध्यम से विद्यार्थियों द्वारा उपाधि हासिल करने के समय संस्थापकों द्वारा छूट प्राप्त होने के प्रति धन्यवाद भी ज्ञापित होता है। मैं उम्मीद करता हूं कि हम भारत में भूतपूर्व छात्रों द्वारा विश्वविद्यालय को संसाधन प्रदान करने की मजबूत परंपरा विकसित करेंगे।

आप लोगों ने मेरी बातें सुनने के लिए बहुत धैर्य का परिचय दिया है। मैं अब अपनी बात समाप्त करना चाहूंगा। भारत में बेहतरी की दिशा में बहुत से परिवर्तन हो रहे हैं। आप लोग हमारे देश, विश्व और इसमें अपने स्थान को निर्धारित करने के काबिल होंगे। सब प्रकार से खुद के लिए महत्वाकांक्षी लक्ष्य निर्धारित करें। परन्तु, इस बात का ध्यान रखें, जिसे प्राचीन भारतीय दार्शनिकों और आधुनिक व्यावहार मनोवैज्ञानिकों दोनों ने कहा है कि निजी संकीर्ण लक्ष्यों की प्राप्ति, अधिक संपत्ति की प्राप्ति, तेजी से पदोन्नति होने या प्रसिद्धि बढ़ने मात्र से आपको क्षणिक आनंद के अलावा कुछ भी प्राप्त नहीं होता है। मैं खुश रहने का रहस्य जानने का दावा नहीं करता किंतु यह स्पष्ट रूप से मालूम पड़ता है कि यदि आपको कार्य करना पसंद है, यदि आप किए जाने वाले कार्य में खुशी महसूस करते हैं तो जब आपको अपना लक्ष्य सचमुच प्राप्त हो जाता है तब इन सब बातों का महत्व बहुत कम रह जाता है।

आप जिस यात्रा का चयन करते हैं उसमें स्वयं का नियंत्रण कहीं अधिक है। सर्वाधिक आनंददायी यात्राएं अक्सर वह हुआ करती हैं जिनके लक्ष्य व्यापक हों और आप अन्य लोगों को अपने साथ लेकर चलते हों, विशेषरूप से उन लोगों को जो आपकी सहायता के बिना यात्रा करने में असमर्थ हों। ऐसा करते हुए आप लोग संसार को एक बेहतर और अधिक स्थिर स्थान बना पाएंगे।

धन्यवाद ! आपके भविष्य के प्रयासों के लिए मेरी शुभकामनाएं और मैं यह आशा करता हूं कि आपके प्रयासों को सफलता प्राप्त हों।